स्टेट ऑफ मध्यप्रदेश

बनाम

रामेश्वर व अन्य

[क्रिमिनल अपील नम्बर 647/2009]

06 अप्रैल, 2009

[अल्तमस कबीर एण्ड सिरिएक जोसेफ, जे.जे.]

प्रक्रियासंहिता, 1860/प्रिवेंशन ऑफ करप्शन एक्ट 1988,

ऐसे.409, 418, 420, 120बी/ऐसे. 13(1)(डी) और/डब्लू ऐसे. 13(2)

सहकारी बैंक- लॉन स्वीकार करने में अवैधता का आरोप विचारनीय न्यायाल ने अरोप पत्र पेश करने का आदेश दिया- माननीय उच्च न्यायालय द्वारा इस आधार पर अपास्त किया गया कि प्रत्यर्थी लोकसेवक नहीं हैं, इसलिए उसको न तो भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के प्रावधान के तहत और ना ही अंतर्गत धारा 409 आई.पी.सी. के तहत दंण्डित किया जा सकता है। माननीय

उच्च न्यायालय ने अपील निर्धारित करते हुए आरोप पत्र को खारिज किया। यह आदेश अपास्त किया गया तथा विचारणीय न्यायालय का आरोप विरचित करने का आदेश बहाल किया गया। विचारणीय न्यायालय ने विचारण आगे बढाया।

शब्द और छंद:

'लोक सेवक'- निवारण भ्रष्टाचार अधिनियम, रोकथाम के संदर्भ मे।

प्रत्यर्थी इंदौर प्रीमियर कॉओपरेटिव बैंक के निदेशक थे तथा लॉन समिति के सदस्य भी थे। वहां लोक अदालत में एक शिकायत दर्ज हुई, उन्होंने कुछ व्यक्तियों के बिना योग्यता जांच किये ऋण के लिए अनुमति दे दी।

प्रत्यर्थी के खिलाफ अरोप पत्र अंतर्गत धारा 409, 420 और 120-बी सपठित धारा 13(1)(डी), धारा 13(2) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 पेश हुआ। विचारणीय न्यायालय ने आरोप विरचित करने के आदेश दिये। अपील में उच्च न्यायालय ने विचारणीय न्यायालय के आदेश को अपास्त किया उच्च ने निर्धारित किया कि प्रत्यर्थी को लोकसेवक नहीं माना जा सकता

और उसे ना तो भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम और ना ही धारा 409 भा.द.स. के तहत दण्डित किया जा सकता है।

इस प्रकार अपील निस्तारित की गई और यह अभिनिर्धारित किया गया।

1. उच्च न्यायालय ने अपील निर्धारित करते हुए लोकसेवक कि परिभाषा पर विचार करते समय इस तथ्य को ध्यान में नहीं में रखा कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 कि धारा 2 सी के संशोधित प्रावधानों के तहत ललित राजशी शाह का निर्णय अब और लागू किये जाने योग्य नहीं होगा। प्रथम दृष्टया प्रतीत होता है कि प्रतिवादी संख्या 1 और 3 बैंक के अध्यक्ष एवं कार्यकारी अधिकारी के रूप में उनकी हैसियत अंतर्गत धारा 2(c) (ix) 1988 अधिनियम के तहत "लोक सेवक" की परिभाषा में आती है। [पैरा 37] [पैरा 525-A-बी]

स्टेट ऑफ महाराष्ट्र बनाम ललित राजशी शाह और अन्य (2000) 2 एस सी सी सी 699 को अनुपयुक्त ठहराया गया।

2. मध्यप्रदेश सहकारी सोसायटी अधिनियम 1960 के तहत सामान्य आपराधिक विधि को लागू करने का ऐसा कोई प्रतिबंध

नहीं है। विशेष रूप से जब आरोप भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 के शामिल हो। (पैरा 38) (525-एफ)

स्त्री अत्याचार विरोधी परिषद बनाम दिलीप नाथूमल चोर्डिया और अन्य (1989) 1 एससीसी 715; ओम वती (श्रीमती) एवं अन्य। बनाम राज्य, दिल्ली प्रशासन के माध्यम से एवं अन्य. (2001) 4 एससीसी 333; मुन्ना देवी बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य। (2001) 9 एससीसी 631; सरकार आंध्र प्रदेश और अन्य बनाम पी. वेंकु रेड्डी (2002) 7 एससीसी 631; महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य बनाम प्रभाका"आओ और अन्य। (2002) 7 एससीसी 636; इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन बनाम एनईपीसी इंडिया लिमिटेड और अन्य (2006) 6 एससीसी 736 और निखिल मर्चेंट बनाम सेंट्रल जांच ब्यूरो एवं अन्य 2008 (11) स्केल 379, रैफर किए गए।

3. उच्च न्यायालय ने रिविजन में प्रत्यर्थी के खिलाफ विरचित किए गए चार्ज को खारिज किया। तत्पश्चात उच्च न्यायालय द्वारा आदेश 17 मार्च 2007 क्रिमिनल रिवीसन सं. 1303 ऑफ 2006 और क्रिमिनल रिवीसन सं. 36 ऑफ 2007 ये दो याचिकाएं अपास्त की गई तथा विचारनीय न्यायालय के प्रत्यर्थी के

विरूद्ध आरोप विरचित करने के आदेश को बहाल किया गया। (पैरा 40) (525-ए-बी)

4. विचारणीय न्यायालय ट्रायल में आगे बढ़े। यह स्पष्ट किया गया कि इस निर्णय में प्रतिपादित मत प्रथम दृष्टया केवल इन याचिकाओं के निस्तारण तक ही सीमित है। यह विचारण को किसी भी प्रकार से प्रभावित नहीं करेगा। (पैरा 40) (525-ए-बी)

केस नियम संदर्भित:

(2000) 2 एस सी सी 699	अंतर किया गया	पैरा 5
(1989) 1 एस सी सी 715	संदर्भित	पैरा 14
(2001) 4 एस सी सी 333	संदर्भित	पैरा 15
(2001) 9 एस सी सी 631	संदर्भित	पैरा 16
(2002) 7 एस सी सी 631	संदर्भित	पैरा 19

(2002) 7 एस सी सी संदर्भित पैरा 19

सी 363

(2006) 6 एस सी सी संदर्भित पैरा 24

सी 736

2008 (11) स्केल 736 संदर्भित पैरा 25

मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय के इंदौर बेंच के आपराधिक रिवीजन नंबर 1303/2006 के निर्णय और आदेश की दिनांक 13.03.2007 से -

रवीन्द्र श्रीवास्तव, सी.डी. सिंह, सनी चौधरी, आदित्य सिंह, के. कृष्ण कुमार, छवि बत्रा, उपासना नाथ, ए वैराग्य और कुनुल वर्मा, अपीलकर्ता की ओर से।

विवेक तन्खा, सुशील कुमार जैन, गुरलीन छाबड़ा, अनुभा सिंह और प्रतिभा जैन, प्रतिवादी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय अल्तमस कबीर द्वारा पारित किया गया।

1. इन दोनों याचिकाओं को एक साथ सुनवाई कर निस्तारण किया गया और याचिका स्वीकार की गई।

2. प्रत्यर्थी इंदौर प्रिमीयर सहाकरी बैंक लिमिटेड का निदेशक था और ऋण स्वीकार करने वाली समिति का सदस्य भी था। हरिश पटेल और कन्हैया लाल यादव ने एक विशेष परिवाद लोकायुक्त इंदौर मध्यप्रदेश में दायर की तथा आरोप लगाया कि प्रत्यर्थी ने 56 लाख 55 हजार की ऋण राशि 35 व्यक्तियों को बिना उनकी ऋण प्राप्त करने की योग्यता जांचे व ऋण की उपयोगिता जांचे स्वीकृत की गई है और जानबूझकर अवैध तरीके से ऋणदाताओं को ऋण उपलब्ध करवाया है। उक्त शिकायत प्राप्त होने पर विशेष लोकायत इंदौर आपराधिक नंबर 133/99 पर दर्ज की गई और बाद अनुसंधान प्रत्यर्थी के विरूद्ध आराप पत्र अंतर्गत धारा 409,420,120-बी भा.द.स. साथ ही धारा 13(1)(डी) सहपठित धारा 13(2) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988, में पेश किया गया। विचारनीय न्यायालय ने चार्जशीट पर प्रथम दृष्टया प्रत्यर्थी के खिलाफ अपराध बनना पाया तथा आदेश दिनांक 04.11.2006 द्वारा आरोप विरचित करने के आदेश दिये। आदेश दिनांक 04.11.2006 से क्षुब्ध होकर प्रत्यर्थी ने उक्त आदेश को अपास्त करने के लिए माननीय उच्च न्यायाल म.प्र की इंदौर बेंच में याचिका दायर की म.प्र. उच्च न्यायालय के विशेष न्यायाधीश इंदौर बेंच ने विशेष केस

नं. 1/2006 में आदेश पारित करते हुए प्रत्यर्थी को उपरोक्त आरोप से उन्मोचित किया।

4. माननीय उच्च न्यायालय ने उभयपक्षों के प्रकरण को निर्धारित करते हुए निष्कर्ष दिया कि प्रत्यर्थी ऋण स्वीकृत समिति का सदस्य था और इस प्रकार के सदस्यों को केवल उस ऋण को अभिनिर्धारित करना होता है जो संबंधित बैंक के प्रबंधक उनके सामने रखते है। यह बैंक मैनेजर का दायित्व है कि वह कमेटी के सामने रखने से पहले और शाखा प्रबंधकों को ऋण समिति को प्रस्तुत करने से पहले ऋण देने की पात्रता से संबंधित तथ्यों को सत्यापित करता। इसके अलावा, कार्यकारी अधिकारी ने बाद में ऋण आवेदनों का सत्यापन भी कर लिया था और ऋण मामलों को मंजूरी के लिए ऋण समिति के समक्ष रखा गया था। उपरोक्त प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय ने माना कि यह नहीं कहा जा सकता कि ऋण समिति के सदस्यों (प्रत्यर्थी) ने अवैध रूप से कार्य किया था और संबंधित उधारकर्ताओं को गलत तरीके से ऋण स्वीकृत किया था। उच्च न्यायालय ने इस तथ्य को भी ध्यान में रखा कि ऋण समिति द्वारा स्वीकृत ऋण की कुल राशि रु. 56,50,000/- में से कुल रु. 64,69,000/- की राशि

संबंधित जमाकर्ताओं द्वारा पहले ही बैंक में जमा कर दी गई थी और इसलिए यह तर्क नहीं दिया जा सकता कि संबंधित उधारकर्ताओं को ऋण स्वीकृत करने से बैंक को कोई मौद्रिक हानि हुई है क्योंकि ऋण की सम्पूर्ण राशि ब्याज सहित उधारकर्ताओं द्वारा पहले ही बैंक में जमा कर दी गई थी।

5. जहां तक प्रत्यर्थी की लोक सेवक की हैसियत का प्रश्न है तो भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के प्रावधानों के तहत अभियोजन के उद्देश्य से उच्च न्यायालय ने न्यायालय के फैसले स्टेट ऑफ महाराष्ट्र बनाम ललित राजशी शाह और अन्य (2000) 2 एस सी सी 699) पर भरोसा जताते हुए यह माना कि प्रत्यर्थी को लोक सेवक के रूप में नहीं माना जा सकता है और इसलिए, वह भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के प्रावधानों अथवा धारा 409 भारतीय दंड संहिता के तहत दंडनीय नहीं है।

6. इस प्रकार उच्च न्यायालय ने अपने आदेश 17 मार्च, 2007 के द्वारा पुनरीक्षण याचिका को स्वीकार कर लिया और प्रत्यर्थी के खिलाफ आरोप तय करने वाले विचारणीय न्यायालय के दिनांक 4.11.2006 के आदेश को रद्द कर दिया और उन्हें धारा 409, 418, 420 और 120-बी भारतीय दंड संहिता और धारा 13

(1)(डी) दंड संहिता की सपठित धारा 13(2) दंड संहिता के तहत उक्त आरोपों से उन्मोचित कर दिया।

7. यह अपील मध्य प्रदेश राज्य द्वारा उच्च न्यायालय के उक्त आदेश के विरूद्ध दायर की गई है।

8. अपीलकर्ता की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री रवीन्द्र श्रीवास्तव मध्यप्रदेश राज्य ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी द्वारा अदा की गई भूमिका और उसकी हैसियत के सवाल पर गलती की है। दंड संहिता के प्रावधानों के तहत अभियोजन के उद्देश्य से "लोक सेवक" के रूप में उक्त प्रत्यर्थी की "सार्वजनिक स्थिति" के प्रश्न पर भी गलती की है। श्री श्रीवास्तव ने यह भी कथन किया कि उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए तथ्यात्मक स्थिति का पुनर्मूल्यांकन करने के लिए आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 401 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 397 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र से परे सुनवाई की थी। जिन प्रावधानों के तहत उन पर आरोप लगाए गए थे, वे आरोप-पत्र में दी गई सामग्री द्वारा समर्थित नहीं है।

9. श्री कन्हैयालाल यादव की शिकायत पर जिला सतर्कता समिति इंदौर द्वारा प्रस्तुत जांच प्रतिवेदन दिनांक 21 जनवरी 1999

का हवाला देते हुए श्री श्रीवास्तव ने प्रस्तुत किया कि जांच में यह बात सामने आयी कि इंदौर मोटर एवं एग्रो मशीनरी जिसका पंजीकृत कार्यालय 535 स्कीम नंबर 54 इंदौर में है, बैंकों द्वारा उक्त रिपोर्ट में नामित व्यक्तियों को विभिन्न प्रकार के वाहनों की खरीद के लिए ऋण दिए गए थे। हालाँकि, उक्त फर्म उपरोक्त पते पर उपलब्ध नहीं थी। यह भी सामने आया कि फर्म का प्रबंधन इंदौर प्रीमियर को-ऑपरेटिव बैंक में कार्यरत जनसंपर्क अधिकारी श्री हेम जोशी के पुत्र श्री हिमांशु जोशी द्वारा किया जाता था और फर्म का चालू खाता किला मैदान शाखा, इंदौर में था। उक्त खाते में डिमांड ड्राफ्ट जमा किए गए और बाद में नकदी निकाल ली गई। यह भी बताया गया कि बैंक प्रशासन की मिलीभगत से वाहनों की खरीद के लिए ऋण स्वीकृत किये गये थे लेकिन लेकिन बैंक को धोखा देने के इरादे से भुनाए गए डिमांड ड्राफ्ट उक्त उद्देश्य के लिए उपयोग नहीं किए गए थे। श्री श्रीवास्तव ने कथन किया कि संक्षिप्त जांच रिपोर्ट यह थी कि श्री हेम जोशी ने बैंक के सार्वजनिक संपर्क अधिकारी के रूप में अन्य प्रत्यर्थियों के साथ मिलकर अपने बेटे श्री हिमांशु जोशी के नाम पर उक्त बैंक ड्राफ्ट भुनाने के उद्देश्य से

एक काल्पनिक फर्म की स्थापना की जो सभी किला मैदान शाखा, इंदौर में स्थित कथित फर्म के खाते में जमा किए गए थे।

10. श्री श्रीवास्तव ने बताया कि बैंक कि विभिन्न शाखाओं के प्रबंधकों द्वारा दिए गए बयानों से प्रथम दृष्टया यह मामला बनता है कि न केवल ऋण स्वीकृत करने से संबंधित नियमों की पालन नहीं की गई। बल्कि प्रत्यर्थी के आवेदन व उसकी जागरूकता की कमी का भी खुलासा हुआ। उन्होंने यह भी कथन किया कि नेशनल बैंक फॉर एग्रीकल्चरल एंड रूरल डेवलपमेंट (बाद में 'नाबार्ड' के रूप में संदर्भित) के अधिकारियों ने एक निरीक्षण किया। जून, 1998 में इंदौर प्रीमियर को-ऑपरेटिव बैंक ने अपनी रिपोर्ट में उन ऋणों के संबंध में आपत्तियां भी उठाईं जो वर्तमान अपीलों का विषय बनीं।

11. श्री श्रीवास्तव ने बताया किया कि जिला सतर्कता समिति का निष्कर्ष यह था कि बैंक की विभिन्न शाखाओं के शाखा प्रबंधकों ने ऋण स्वीकृत करने की नीति, अध्यक्ष और मुख्य कार्यकारी के संबंध में दिए गए निर्देशों का पालन नहीं किया है। बैंक के अधिकारी, जो यहां प्रतिवादी संख्या 1 और 3 हैं, नाबार्ड की निरीक्षण रिपोर्ट के बावजूद कोई कार्रवाई करने में विफल रहे। इससे यह निष्कर्ष निकला कि उन्होंने भी बैंक को धोखा देने में निर्णायक

भूमिका निभाई थी। श्री श्रीवास्तव ने बताया कि चूंकि उक्त जांच रिपोर्ट में कई अन्य लोगों के साथ-साथ सभी प्रत्यर्थियों को दोषी ठहराया गया था, इसलिए यह सिफारिश की गई थी कि सभी नामित व्यक्तियों के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 420 सपठित धारा 120-बी के तहत मामला दर्ज किया जावे। धारा 406, 409, 419 सपठित धारा 420 भारतीय दंड संहिता के तहत प्रत्यर्थियों सहित बैंक के अधिकारियों के खिलाफ मामला दर्ज करने की एक और सिफारिश की गई थी।ऋण समिति के सदस्यों के खिलाफ भी विभागीय कार्रवाई की सिफारिश की गई थी जिसके प्रत्यर्थी संख्या 1 रामेश्वर अध्यक्ष थे, जबकि अन्य प्रत्यर्थी जो बैंक के सभी निदेशक थे, सदस्य थे।

12. श्री श्रीवास्तव ने आग्रह किया कि उच्च न्यायालय ने ऋणों की मंजूरी के संबंध में उत्तरदाताओं को किसी भी जिम्मेदारी से पूरी तरह से मुक्त करके और अपर्याप्त या अनुचित सत्यापन के लिए ऋण देने हेतु उधारकर्ताओं की पात्रता के संबंध में शाखा प्रबंधकों और कार्यकारी अधिकारी पर धोखाधड़ी का पूरा बोझ डालकर गलती की है। विद्वान अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया कि उच्च न्यायालय ने यह देखने में गलती की है कि ऋण स्वीकृत

करने के उद्देश्य से ऋण समिति के सदस्यों की पर्याप्त भूमिका थी, क्योंकि जिन शाखा प्रबंधकों ने सिफारिश की थी उन्होंने ऐसे ऋणों के अनुदान के संबंध में अपने स्तर तक आधारभूत कार्य पहले ही तैयार कर लिया था।

13. श्री श्रीवास्तव ने कथन किया कि प्रकरण के तथ्यात्मक पहलुओं पर गौर करते हुए उच्च न्यायालय उक्त पहलुओं के निष्कर्षों तक पहुंचने में अपनी पुनरीक्षण शक्तियों से परे गया है जिन्हें साक्ष्य के आधार पर स्थापित किया जाना बाकी है।

14. अपनी बात का समर्थन करने के लिए श्री श्रीवास्तव ने सबसे पहले स्त्री अत्याचार विरोधी परिषद बनाम दिलीप नाथूमा/चोर्डिया एवं अन्य ((1989) 1 एससीसी 715) के फैसले का हवाला दिया जिसमें किसी आरोपी के खिलाफ आरोपों से मुक्ति या आरोप तय करने से संबंधित प्रश्न पर विचार करते समय यह माना गया था कि जब विचारणीय न्यायालय प्रथम दृष्टया मामला मानते हुए आरोपी के खिलाफ आरोप तय करता है तब उच्च न्यायालय को आरोपी को दोषी ठहराने के लिए आधारों की पर्याप्तता की जांच करने और उसे आरोप मुक्त करने का आदेश देने में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

15. फिर श्री श्रीवास्तव ने इस न्यायालय के एक अन्य निर्णय ओम वती (श्रीमती) एवं अन्य बनाम राज्य, दिल्ली प्रशासन एवं अन्य. ((2001) 4 सेकंड 333] का उल्लेख किया जिसमें भी दंड प्रक्रिया संहिता 1973 धारा 227, 228 और 401 के प्रावधानों पर भी विचार करते हुए अन्य बातों के साथ-साथ कहा कि उच्च न्यायालय को आमतौर पर आरोप तय करने के लिए विचारणीय न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जब तक कि घोर अन्याय न हो।

16. अंततः मुन्ना देवी बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य [(2001) 9 एससीसी] के निर्णय का संदर्भ दिया गया जिसमें यह प्रतिपादित किया गया था कि किसी आरोपी के खिलाफ लगाए गए आरोपों को रद्द करने के लिए नियमित और आकस्मिक तरीके से उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग नहीं किया जा सकता है, सिवाय इसके कि जहां कोई कानूनी रोक हो या प्रथम सूचना रिपोर्ट में आरोपी के खिलाफ अपराध नहीं बनता हो।

17. श्री श्रीवास्तव ने कथन किया कि उपरोक्त के अतिरिक्त उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष गलत था कि 'उत्तरदाता लोक सेवक नहीं थे', क्योंकि वे सहकारी बैंक के पदाधिकारी के रूप में

चुने गए थे। उन्होंने कथन किया कि उच्च न्यायालय ने स्टेट ऑफ महाराष्ट्र बनाम ललित राजशी शाह अन्य (सुप्रा) के मामले में इस कोर्ट के फैसले पर गलत भरोसा किया था जिसमें भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 की धारा 2 में निहित "लोक सेवक" की परिभाषा पर विचार किया जा रहा था। उक्त अधिनियम में धारा 2 ई में "लोक सेवक" को भारतीय दंड संहिता की धारा 21 में परिभाषित "लोक सेवक" के रूप में परिभाषित किया गया है। श्री श्रीवास्तव ने आग्रह किया कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 में "लोक सेवक" की बहुत व्यापक और सीमित व्याख्या दी गई है जो लालजीत राजशी शाह और अन्य के मामले में इस मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होगी।

18. श्री श्रीवास्तव ने कथन किया कि बैंकिंग में लगी एक पंजीकृत सहकारी समिति के पदाधिकारी होने के कारण प्रत्यर्थी, अधिनियम 1988 की धारा 2 (सी)(ix) के तहत "लोकसेवक" की परिभाषा के अंतर्गत आते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि उच्च न्यायालय मध्यप्रदेश सहकारी समिति अधिनियम, 1960 की धारा 87 पर ध्यान देने में विफल रहा है जो यह प्रावधान करता है कि रजिस्ट्रार और अन्य अधिकारी, साथ ही सहकारी बैंक या सहकारी

समिति के कर्मचारी को भारतीय दंड संहिता की धारा 21 के परिप्रेक्ष्य में "लोक सेवक" माना जाएगा।

19. इस संबंध में श्री श्रीवास्तव ने इस न्यायालय के निर्णय आंध्र प्रदेश सरकार बनाम पी. वेंकु रेड्डी और अन्य [(2002) 7 खंड 631] में, जहां ललित राजशी शाह अन्य (सुप्रा) के निर्णय का संदर्भ लिया तथा यह महसूस किया गया कि 1947 के अधिनियम में परिभाषित की गई "लोक सेवक" की परिभाषा अलग थी क्योंकि क्योंकि यह एक व्याख्या पर आधारित थी जिसने ऐसी परिभाषा को केवल ऐसे "लोक सेवकों" तक सीमित कर दिया था जो भारतीय दंड संहिता की धारा 21 में शामिल थे। स्टेट ऑफ महाराष्ट्र और अन्य बनाम प्रभाकरों और अन्य [(2002) 7 एस सी सी 636] के निर्णय का भी संदर्भ लिया गया जिसमें भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 2 (सी) के तहत लोक सेवक अभिव्यक्ति की व्यापक परिभाषा को लागू माना गया था, न कि भारतीय दंड संहिता की धारा 21 के तहत संकीर्ण परिभाषा को।

20. श्री श्रीवास्तव ने कथन किया कि जहां तक मध्य प्रदेश राज्य का संबंध है, वही प्रविष्टियां प्रासंगिक होंगी जो एस एल पी (सी आर एल) संख्या 6929/07 में है।

21. अपीलकर्ता की ओर से की गई दलीलों का जवाब देते हुए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री विवेक तन्खा ने सर्वप्रथम भारतीय दंड संहिता की धारा 409, 418, 420 और 120-बी एवं भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(1)(डी) सपठित धारा 13(2) के तहत प्रत्यर्थियों के विरूद्ध लगाए गए आरोपो को लिया। श्री तन्खा ने बताया कि प्रतिवादी संख्या 1 के विरूद्ध इंदौर प्रीमियर को-ऑपरेटिव बैंक के अध्यक्ष/प्रबंधक और ऋण मंजूरी समिति के सदस्य के रूप में जब वह एक लोक सेवक था, 4 मार्च, 1997 से 4 मई, 1998 तक की अवधि के दौरान आरोप विरचित किए गए। प्रतिवादी संख्या 1 के विरूद्ध आरोप यह था कि अन्य आरोपी व्यक्तियों की मिलीभगत से एवं "इंदौर मोटर एंड एग्रो मशीनरी" से संबंधित जाली दस्तावेजों के आधार पर, उन्होंने वाहनों की खरीद के उद्देश्य से अन्य सह-अभियुक्तों द्वारा नियमानुसार जमा की गई मार्जिन मनी की सुनिश्चितता के बिना और सुरक्षा प्राप्त किए बिना, बैंक नियमों का उल्लंघन करते हुए ऋण स्वीकृत किए गए और आवेदकों को सीधे ऐसे ऋणों के चेक/ड्राफ्ट जारी किए गए, जिन्होंने वाहन खरीदे बिना राशि वापस ले ली जिसके परिणामस्वरूप 56,50,000/- रुपये का दुरुपयोग हुआ। प्रतिवादी संख्या 1 पर

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 और भारतीय दंड संहिता के उपर्युक्त प्रावधानों के तहत दंडनीय अपराध करने का आरोप लगाया गया था तथा अन्य प्रत्यर्थियों के खिलाफ भी इसी तरह के आरोप लगाए गए थे।

22. श्री तन्खा ने प्रस्तुत किया कि जिला सतर्कता समिति की जांच रिपोर्ट से बिल्कुल स्पष्ट है कि ये बैंक की विभिन्न शाखाओं के शाखा प्रबंधक थे, जो ऋण देने और मंजूरी देने से संबंधित प्रक्रिया का पालन करने में विफल रहे थे और श्री श्रीवास्तव द्वारा अपनी प्रविष्टियों के दौरान ऋणों की मंजूरी हेतु प्रस्ताव पेश करने से पहले प्रत्यर्थियों पर थोपी गई सारी कमियों को शाखाओं में पूरा किया जाना आवश्यक था। श्री तन्खा ने कथन किया कि ऋण मंजूरी समिति को अनगिनत ऋण ई-आवेदनों से निपटना था और उक्त समिति के लिए प्रत्येक आवेदन की जांच करना एवं यह सुनिश्चित करना संभव नहीं था कि ऋण देने की सभी शर्तें पूरी हो गई हैं अथवा नहीं। श्री तन्खा ने आग्रह किया कि वास्तव में जांच रिपोर्ट में प्रत्यर्थियों के खिलाफ एकमात्र आरोप यह था कि उन्होंने नाबार्ड की निरीक्षण रिपोर्ट के बावजूद कोई कार्रवाई नहीं की थी और यह केवल एक अनुमान था जिसके परिणामस्वरूप

यह निष्कर्ष निकला कि साथ हुई धोखाधड़ी में बैंक के चेयरमैन और मुख्य कार्यकारी अधिकारी की भी मुख्य भूमिका थी।

23. श्री तन्खा ने कथन किया कि उपरोक्त के अलावा जांच रिपोर्ट में प्रत्यर्थियों के खिलाफ एकमात्र अन्य आरोप यह था कि ऋण समिति के सदस्य अपने कर्तव्यों को कुशलतापूर्वक निभाने में विफल रहे थे। उन्होंने कहा कि श्री श्रीवास्तव द्वारा लगाए गए आरोप वास्तव में विभिन्न शाखाओं से संबंधित अधिकारी शाखा प्रबंधकों एवं उक्त शाखाओं के संबंधित अधिकारियों पर निर्देशित थे।

24. श्री तन्खा ने कथन किया कि प्रत्यर्थियों के खिलाफ भारतीय दंड संहिता के प्रावधानों के तहत या भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के प्रावधानों के तहत आरोप तय करने का कोई औचित्य नहीं था। उन्होंने आग्रह किया कि यदि उत्तरदाताओं ऋण स्वीकृत करने में कोई अनियमितता बरती गयी है, वहां मध्यप्रदेश सहकारी समिति अधिनियम के तहत पर्याप्त स्कोप है बजाय दबाव बनाने के लिए किसी आपराधिक प्रक्रिया का सहारा लेने के मूलतः यह सिविल प्रकृति का था। श्री तन्खा ने इस न्यायालय के निर्णय इंडियन ऑइल कॉर्पोरेशन बनाम एन ई पी सी इंडिया लिमिटेड 7 और अन्य ((2006) 6 एस सी सी 736] का हवाला देते हुए

न्यायलय द्वारा की गई टिप्पणियों पर भरोसा करते हुए कहा कि व्यावसायिक हलकों में विशुद्ध रूप से दीवानी विवादों को आपराधिक मामलों में बदलने की बढ़ती प्रवृत्ति पर ध्यान देना आवश्यक था तथा धारा 482 सीऔरपीसी के तहत यह देखने की आवश्यकता थी कि क्या शिकायत में अपराध बनाने के लिए आवश्यक आरोप मौजूद थे जैसा कि आरोप लगाया गया है।

25. आगे, निखिल मर्चेंट बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो और अन्य. (2008 (11) स्केल 379] के निर्णय का हवाला दिया गया जहां, संविधान के अनुच्छेद 142 का सहारा लेते हुए, यह देखा गया कि उक्त मामले में शामिल विवाद में कुछ आपराधिक पहलुओं के साथ एक दीवानी विवाद का रंग दिया गया। श्री तन्खा ने कहा कि वर्तमान मामले में भी यही स्थिति है, जहां विवाद मुख्य रूप से दीवानी प्रकृति का था, जिसे भारतीय दंड संहिता और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 के दायरे में लाने के लिए इसे आपराधिक मोड़ दिया गया था।

26. श्री तन्खा ने मनोज शर्मा बनाम स्टेट और अन्य (मनु/एस सी/8122/2008) के निर्णय का भी उल्लेख किया जिसमें निर्धारण के लिए जो प्रश्न आया वह यह था कि क्या उन

अपराधों के लिए प्रथम सूचना रिपोर्ट जो समझौता योग्य नहीं थी, उन्हें धारा 482 दं.प्र.सं. या संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रद्द किया जा सकता है, जब आरोपी और शिकायतकर्ता ने आपस में समझौता कर मामला सुलझा लिया हो। श्री तन्खा ने कथन किया कि इस न्यायालय ने यह मानते हुए आदेश को रद्द कर दिया था कि एक बार निजी पक्षों के बीच दीवानी प्रकृति के सुलझे गए विवाद में धारा 482 सीऔर.पी.सी. या संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत ऐसी मुकदमेबाजी को समाप्त करने के लिए शक्तियों का प्रयोग करना अधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण होगा।

27. इस प्रश्न के संबंध में, क्या उत्तरदाता लोक सेवक थे या नहीं, श्री तन्खा ने क्रमबद्ध तरीके से कथन किया कि इस न्यायालय द्वारा निर्णय दिया गया कि सार्वजनिक समारोहों को छोड़कर लोक सेवक उन अधिनियमों तक ही सीमित उद्देश्यों के लिए जिनके तहत वे हैं, अपने अधिकारों निर्वहन करें। इस संबंध में इस संबंध में श्री तन्खा ने ललित राजशी शाह अन्य के निर्णय का उल्लेख किया जो कि श्रीवास्तव द्वारा संदर्भित था, जिसमें यह प्रतिपादित किया गया था कि प्रबंध समिति के अध्यक्ष और सदस्य लोक सेवक नहीं थे, लेकिन उन्हें मध्यप्रदेश सहकारी समिति अधिनियम के तहत

एम.पी. के तहत लोक सेवक माना गया था, किसी अन्य उद्देश्य के लिए नहीं।

28. मध्यप्रदेश सहकारी अधिनियम, 1960 के तहत उनकी दलीलों के समर्थन में श्री तन्ख ने सहकारी समितियों के प्रशासन का संदर्भ देते हुए कथन किया कि उक्त अधिनियम पूर्णतः आत्मनिर्भर था। अधिनियम की धारा 74 का संदर्भ देते हुए श्री तन्खा ने कथन किया कि इसका खंड (डी) तात्कालिक प्रकार के कथित अपराध के संबंध में पर्याप्त उपचार निहित है। इसके अलावा, धारा 75 में सिद्ध अपराध के मामले में दंड का प्रावधान है और धारा 76 में यह भी प्रावधान है कि अधिनियम के तहत अपराधों की सुनवाई प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट द्वारा की जाएगी।

29. भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 2(सी)(ix) में "लोक सेवक" की परिभाषा के संबंध में यह प्रस्तुत किया गया है कि इसे दो भागों में पढ़ा जाना चाहिए और "लोक सेवक" की परिभाषा" सह के संबंध में उक्त प्रावधान में ऑपरेटिव सोसाइटी को पहले भाग में कवर किया जाएगा न कि ए को दूसरे भाग में।

30. श्री तन्खा ने प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थियों के विरूद्ध आरोप बिना किसी आधार के थे जैसा कि जिला सतर्कता समिति

की जांच रिपोर्ट से स्पष्ट है, जिसने शाखा कार्यालयों के दरवाजे पर 35 व्यक्तियों को ऋण देने की जिम्मेदारी दी थी और उत्तरदाताओं को केवल नाबार्ड की रिपोर्ट पर कार्रवाई न करने और अपने कर्तव्यों का कुशलतापूर्वक निर्वहन न करने में उनकी कथित विफलता के लिए आरोप के दायरे में शामिल किया था। श्री तन्खा ने कथन किया कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 की धारा 13(1)(डी) और 13(2) सपठित भारतीय दंड संहिता की धारा 409, 418, 420 और 120-बी के तहत प्रत्यर्थियों के खिलाफ आरोपों को बनाए रखने के लिए ये पर्याप्त नहीं थे और उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थियों के विरूद्ध आरोपों को सिरे से खारिज कर दिया था।

31. एस एल पी (सी आर एल) संख्या 6929/07 के संबंध में श्री तन्खा ने कथन किया कि यह 2 लाख रुपये के अस्पताल ऋण के संबंध में था जिसे अग्रिम दिया गया था और 10 जुलाई 2008 को ब्याज के साथ चुकाया भी गया था। श्री तन्खा ने कथन किया कि दोनों मामलों में ब्याज सहित कई ऋणों की मूल राशि चुका दी गई थी और परिणामस्वरूप आरोपों का आधार ही शून्य था इसलिए अभियोजन रद्द किया जाना चाहिए था।

32. श्री तन्खा की दलीलों के अतिरिक्त, कुछ प्रत्यर्थियों की ओर से पेश हुए श्री सुशील कुमार जैन ने कहा कि जब तक आरोप-पत्र में आपराधिक इरादे का खुलासा नहीं किया जाता तब तक धारा 406 या धारा 409 के तहत कोई आरोप नहीं लगाया जाएगा। उन्होंने यह भी आग्रह किया कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने के लिए आरोपी को एक लोक सेवक होना होगा और कथित तौर पर जिस संपत्ति का दुरुपयोग किया गया है वह उसे तब सौंपी गई होगी जब वह एक लोक सेवक था। उन्होंने आग्रह किया कि आरोप-पत्र में ऐसा कोई आरोप नहीं है जिसे यह प्रतीत होता हो कि सोसायटी द्वारा दिया गया ऋण राज्य से प्राप्त किसी फंड या योगदान से दिया गया था। तदनुसार, किसी के दुरुपयोग का प्रश्न है, तो लोक सेवक के रूप में लोक सेवक द्वारा राशि प्राप्त नहीं की गई है।

33. श्री जैन ने श्री तन्खा द्वारा की गई अन्य दलीलों को दोहराते हुए कथन किया कि प्रत्यर्थियों को ऋण हेतु आवेदन करने और प्राप्त करने के लिए उधारकर्ताओं की अयोग्यता के बारे में कोई सचेत ज्ञान नहीं था और शाखा कार्यालय द्वारा ऋण सिफारिशों और प्रस्तावों के आधार पर स्वीकृत किए गए थे।

34. श्री जैन ने यह भी प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थियों के खिलाफ आरोप गलत थे और खामियों के संबंध में उपाय यदि कोई हो, सामान्य आपराधिक प्रक्रिया के तहत नहीं, बल्कि एम.पी. सहकारी समिति अधिनियम, 1960 के प्रावधानों के तहत है।

35. संबंधित पक्षों की ओर से की गई दलीलों और उसके समर्थन में उद्धृत विभिन्न निर्णयों पर विचार करने के बाद हम इन अपीलों में दिए गए आदेश में उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से सहमत होने में असमर्थ हैं।

36. यद्यपि इसमें कोई संदेह नहीं कि जिला सतर्कता समिति की जांच रिपोर्ट में शाखा कार्यालयों और ऋण के सदस्यों द्वारा जमीनी कार्य पूरा करने के संबंध में ऋण स्वीकृत करने में प्रत्यर्थियों की भूमिका पूरी तरह से मंजूरी समिति ने अकुशलतापूर्वक काम करते हुए प्रबंधकीय दिखाई गई हो। यह भी सुझाव दिया कि बैंक के अध्यक्ष और कार्यकारी अधिकारी ने बैंक को धोखा देने में अन्य आरोपियों के साथ मिलीभगत की थी। जांच रिपोर्ट में यह कहा गया था कि प्रत्यर्थियों ने बैंक के सार्वजनिक संपर्क अधिकारी श्री हेम जोशी के साथ साजिश रची और उसके बेटे, हिमांशु जोशी ने किला में एक काल्पनिक फर्म- इंदौर मोटर एंड

एग्रो मशीनरी का चालू खाता बनाए रखा। इंदौर में बैंक की मैदान शाखा ने बिना कोई वाहन खरीदे ऋण स्वीकृत किया था और उक्त खाते का उपयोग करके ऋण के संबंध में जारी किए गए विभिन्न डिमांड ड्राफ्ट को भुना लिया।

37. उच्च न्यायालय ने "लोक सेवक" अभिव्यक्ति की परिभाषा पर विचार करते समय इस तथ्य पर भी ध्यान नहीं दिया कि ललित राजशी शाह अन्य का निर्णय भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 2(c) के संशोधित प्रावधानो के तहत अब और सुसंगत नहीं था। प्रथम दृष्टया ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिवादी संख्या 1 और 3 बैंक के अध्यक्ष और कार्यकारी अधिकारी के रूप में अधिनियम 1988 की धारा 2(c)(ix) के तहत "लोक सेवक" की परिभाषा के अंतर्गत आते हैं जो इस प्रकार है:- "लोक सेवक" का अर्थ है - कोई भी व्यक्ति जो कृषि, उद्योग, व्यापार या बैंकिंग में लगी एक पंजीकृत सहकारी समिति का अध्यक्ष, सचिव या अन्य पदाधिकारी है, जो केंद्र सरकार या राज्य से कोई वित्तीय सहायता प्राप्त कर रहा है, सरकार या केंद्रीय, प्रांतीय या राज्य अधिनियम द्वारा या उसके तहत स्थापित किसी निगम से, या सरकार के स्वामित्व या नियंत्रण या सहायता प्राप्त किसी प्राधिकरण

या निकाय से या कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 617 में परिभाषित सरकारी कंपनी से।

38. श्री तन्खा जिनका श्री जैन ने समर्थन किया, ने दलील दी कि म.प्र. सहकारी सोसायटी अधिनियम, 1960 अपने आप में एक पूर्ण संहिता थी और अभियोजन एजेंसी का उपचार आपराधिक प्रक्रिया के अंतर्गत नहीं बल्कि उसकी धारा 74 से 76 के दायरे में आता है, इसलिए इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए यह स्वीकार भी नहीं किया जा सकता है कि मप्र सहकारी सोसायटी अधिनियम, 1960 के अंतर्गत सामान्य आपराधिक कानून के प्रावधानों के तहत कोई रोक नहीं है, खासकर जब कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के तहत आरोप शामिल हों।

39. अभियुक्तों पर दबाव बनाने के लिए दीवानी विवादों को आपराधिक मामलों में बदलने की प्रवृत्ति के संबंध में श्री तन्खा द्वारा कथन किया कि संदर्भित निर्णय निर्विवाद हैं लेकिन यह इस मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होगा जहां बैंक को धोखा देने की साजिश का आरोप लगाया गया हो।

40. परिणामतः हम श्री श्रीवास्तव की दलीलों को स्वीकार करने के इच्छुक हैं कि उच्च न्यायालय ने पुनरीक्षण में प्रत्यर्थियों

के खिलाफ लगाए गए आरोपों को गलती से रद्द कर दिया था। परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 17 मार्च 2007 को क्रिमिनल रिवीसन सं. 1303 ऑफ 2006 और क्रिमिनल रिवीसन सं. 36 ऑफ 2007 में इन दो अपीलों में आक्षेपित आदेश को खारिज करते हुए विचारणीय न्यायालय द्वारा आरोपित प्रत्यर्थियों को बहाल कर दिया। विचारणीय न्यायालय को आगे बढ़ने के निर्देश के साथ अपीलों का निस्तारण किया गया। हम यह स्पष्ट कर देते हैं कि इस निर्णय में जो विचार व्यक्त किये गये हैं, केवल अपील के निस्तारण के लिए प्रथम दृष्टया प्रकृति के हैं और किसी भी तरह से मुकदमे को प्रभावित नहीं करना चाहिए।

उपरोक्तानुसार अपील निस्तारण किया जाता है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी मनोरमा मीणा (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।